Retail Price ₹ 20

अगस्त 2025

दादावाणी

किसी को डेढ़ नंबर के चश्मे होते हैं और
किसी को चश्मे नहीं होते, तो फर्क पड़ता है न?
महात्माओं को अंश सत्ता का प्रकटपन है,
दादाश्री को 356 डिग्री जितनी सत्ता का प्रकटपन है
और तीर्थंकर तो संपूर्ण स्वसत्ताधारी हैं!

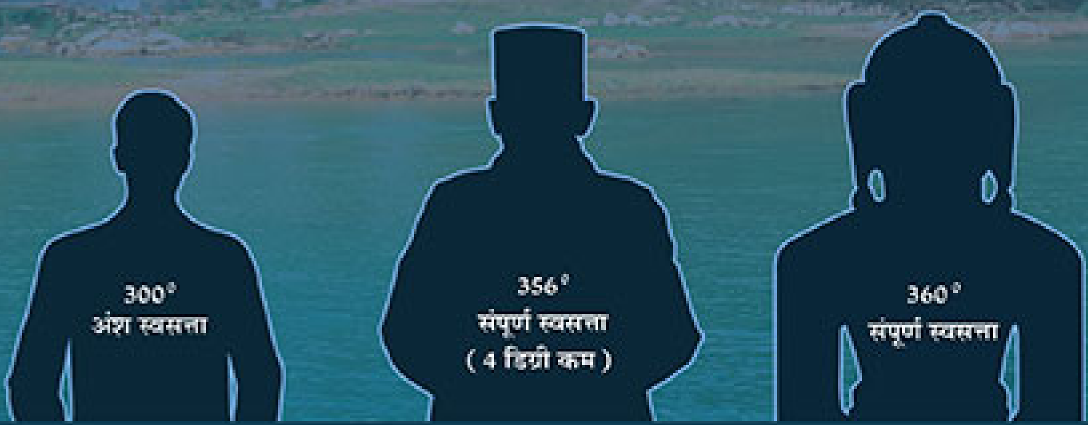

आत्मज्ञानी पूज्यश्री दीपकभाई का यु.एस.ए. - कनाडा का सत्संग प्रवास : जून - जुलाई 2025

एलनटाउन : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 14-15 जून 2025

सत्संग
सांस्कृतिक कार्यक्रम
गरबा
फूड मेला
दर्शन

टोरन्टो : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 20 -21 जून 2025

सत्संग
ज्ञानविधि
प्रश्नोत्तरी

ओटावा : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 23 -24 जून 2025

सत्संग
दर्शन

दादावाणी

अंश स्वसत्ता - सर्वांश स्वसत्ता

वर्ष : 20 अंक : 10
अखंड क्रमांक : 238
अगस्त 2025
पृष्ठ - 28

Editor : Dimple Mehta
© 2025
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Multiprint
Opp. H B Kapadiya New High School, At-Chhatral, Tal: Kalol,
Dist. Gandhinagar - 382729

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदाबाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज,**
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
5 साल
भारत : 1000 रुपये
वार्षिक
भारत : 200 रुपये
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

संपादकीय

जगत् में दो प्रकार की सत्ताएँ हैं, एक *'पुद्‌गल'* विभाग की परसत्ता और दूसरी 'खुद के' विभाग की स्वसत्ता। आत्मज्ञान होने से पहले महात्माओं का 'मैं' परक्षेत्र में और परसत्ता में था। ज्ञान मिलते ही 'मैं' स्वक्षेत्र में और स्वसत्ता में आ जाता है, अर्थात् पुरुषार्थ और पराक्रम की शुरूआत होती है। 'मैं चंदू हूँ', वह रोंग बिलीफ टूटती है और 'मैं शुद्धात्मा हूँ', वह राइट बिलीफ बैठती है। वह राइट बिलीफ ही स्वसत्ता है, जबकि रोंग बिलीफ परसत्ता है। परंतु स्वसत्ता बिलीफ में रहे तब तक क्षायक समकित है और स्वसत्ता में निरंतर बरते वहाँ भगवान पद यानी कि पूर्णाहुति!

वकालत की क्रिया, वकालत का ज्ञान, वकालत का अहंकार सब परसत्ता है, उसका ज्ञाता-द्रष्टा, वह स्वसत्ता है। इस तरह परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) ने परसत्ता और स्वसत्ता के बीच लाइन ऑफ डिमार्केशन (भेदरेखा) डाल दी है। हमें होम डिपार्टमेन्ट में रहकर आत्मा और अनात्मा के संधिस्थान को एकाकार नहीं होने देना है। अंत:करण सिर्फ ज्ञेय है और खुद ज्ञाता है। जितना शुद्ध उपयोग रहे उतनी स्वसत्ता उत्पन्न होती है। एक घंटा शुद्धात्मापद में बैठकर प्रतिक्रमण होता है तब भी स्वसत्ता का अनुभव होता है।

दादाश्री की कृपा से शुद्धात्मा की निरंतर प्रतीति तो प्राप्त हो गई है, स्वसत्ता की स्थापना हो गई है, परंतु अनुभवदशा यानी कि स्वसत्ता का संपूर्ण प्रकटीकरण हो जाए, यह ध्येय अब रखने जैसा है। दादाश्री कहते हैं, कि यह अनुभव अभी नहीं होगा, वह तो जैसे-जैसे फाइलों रूपी ऋण (कर्ज़) चुकाते जाओगे, वैसे-वैसे स्वसत्ता आपके हाथ में आती जाएगी। जैसे-जैसे डिस्चार्ज अहंकार खत्म होता जाएगा, वैसे-वैसे स्वसत्ता का प्रकटीकरण होता जाएगा।

मूल आत्मा तो स्वसत्ता में ही रहा हुआ है, अज्ञानी का भी स्वसत्ता में ही रहा हुआ है। खुद की मूल सत्ता क्या है? केवलज्ञान सत्ता। उसने खुद की सत्ता कभी छोड़ी ही नहीं, अनंतकाल में उसकी सत्ता को कोई अन्य तत्त्व कुछ नहीं कर सका है। 'खुद' केवल प्रकाश स्वरूप ही रहा हुआ है।

आत्मा 'केवलज्ञान स्वरूप' है परंतु सत्ता की वजह से फर्क है। सत्ता यानी आवरण की वजह से केवलज्ञान दिखाई नहीं देता, बाहर का दिखाई देता है। सत्ता वही की वही रहती है। जैसे किसी को डेढ़ नंबर का चश्मा लगा हो और किसी को चश्मा न लगा हो तो फर्क पड़ता है न? महात्माओं को आंशिक सत्ता का प्रकटीकरण, दादाश्री को 356 डिग्री जितना सत्ता का प्रकटीकरण, जबकि तीर्थंकर तो संपूर्ण स्वसत्ताधारी!

पाँच आज्ञा पालन से केवलज्ञान के अंशो की शुरुआत हुई। अब वे अंश दिन-प्रतिदिन पुरुषार्थ द्वारा बढ़ते जाएँ और परसत्ता और स्वसत्ता का स्वरूप सर्वांग रूप से समझकर स्वसत्ता के उपभोग में निरंतर बढ़ोत्तरी होती जाए और पूर्णाहुति पद की प्राप्ति करें, यही हृदयपूर्वक अभ्यर्थना!

जय सच्चिदानंद

अंश स्वसत्ता - सर्वांश स्वसत्ता

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलतः गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

स्वसत्ता के सालियाणा का वैभव ही अलग

प्रश्नकर्ता : "सालियाणा परसत्ते जेने ना पोसाय रे, स्वसत्ते 'ते' साहेबी समृद्ध सिद्ध सहाये रे..." - कविराज

दादाश्री : अब, इसमें दो सत्ताएँ हैं भीतर। चंदूभाई नाम है आपका?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : दो सत्ताएँ हैं। एक आत्मा की सत्ता है, खुद के क्षेत्र में। आत्मा क्षेत्रज्ञ है। वह खुद के क्षेत्र में क्षेत्रज्ञ हैं और यदि पराये क्षेत्र में गए, अनात्म विभाग में, तो क्षेत्राकार हो जाते हैं। ये परक्षेत्र में बैठे हुए हैं।

'सालियाणा परसत्ते ना पोसाय।' यह सालियाणा (सालियाणा - निवृत हो चुके राजवियों को मिलने वाला वार्षिक भत्ता) जो है न अभी, अभी जो आप भुगत रहे हैं, वह आपकी सत्ता का नहीं है। जैसे कि वह राजाओं का राज ले लेने के बाद सालियाणा तय कर देते हैं न, वह क्या हमेशा के लिए हो जाता है? अरे, उसके बाद एक दूसरा प्रस्ताव तय होता है उस दिन से बंद कर देते हैं। यानी अपनी सत्ता की नहीं है यह चीज़। सत्ता की होती तो आप कुछ इधर-उधर होने ही नहीं देते न! परसत्ता है।

फिर कहते हैं, जिसे सालियाणा परसत्ते न पुसाता हो कि अरे, इसमें हमें यह बंधन है और इससे बंधे हुए हैं। यह जैसा रखे वैसा रहना, वह कैसे पुसाएगा, कहते हैं? अपना स्वतंत्र क्या है? यानी स्वसत्ता प्राप्त होती है तभी वैभव प्राप्त होता है। जैसे ये भाई (महात्मा) कह रहे हैं न, मैं वैभव में हूँ। भले ही लक्ष्मी न हो, उसका हर्ज़ नहीं है। बाकी सारी परेशानियाँ हों, उसका हर्ज़ नहीं है परंतु वैभव तो भीतर (होना) चाहिए, कैसा? भय न लगे, चिंता न हो, परेशानी न हो, शरीर में। समाधि रहे। अरे, फिर उसके जैसा वैभव और कौन सा होगा? समाधि न जाए, ऐसा वैभव तो चाहिए न?

यदि आत्मज्ञान प्राप्त करवाए, ऐसे ज्ञानी पुरुष हैं तो फिर और क्या करना बाकी रहा? उसके लिए तो हम भटक रहे हैं अनंत जन्मों से। अनंत जन्मों से यही हेतु है न, और कौन सा हेतु है? किस तरह स्थिर हो पाएँ हमारे अपने देश (आत्मा) में जाकर! अभी यह जो आत्मा है उसमें परमात्म शक्ति पूर्णतः दबी हुई है और तब तक यह परसत्ता का सालियाणा लेना है। यह सब क्या कहा जाएगा?

प्रश्नकर्ता : परसत्ताएँ हैं सारी।

दादाश्री : हाँ, वह अभी इन्होंने गाया न! ये परसत्ता के सालियाणे कब तक, ऐसा कहते हैं। वह तो, स्वसत्ता का सालियाणा होना चाहिए। क्षेत्रज्ञ हो जाएँ तो फिर झंझट ही नहीं न!

हम आपको आपकी स्वसत्ता में बैठा देते हैं। वह तो, उसका तो वैभव ही अलग होता है। वह वैभव ही अलग प्रकार का होता है। फिर चेहरे पर कड़वाहट नहीं दिखती।

स्वसत्ता में आने पर होता है स्वतंत्र

प्रश्नकर्ता : अभी आपने यह जो कहा कि परतंत्रता से स्वतंत्रता में आने का प्रयत्न रहना चाहिए, परसत्ता से स्वसत्ता में।

दादाश्री : हाँ, यानी वह भाव रहना चाहिए कि मैं अपने स्वरूप भाव में आ सकूँ।

प्रश्नकर्ता : अब, उस परसत्ता से स्वसत्ता में कोई आ गया हो तो उस स्थिति को क्या कहेंगे?

दादाश्री : उसे स्वरूप का भान हो गया कहेंगे। स्वरूप का भान होने पर स्वतंत्र होने लगता है फिर वहाँ से। यानी वह जो परतंत्रता का भाग है पहले का, वह वहाँ के सारे हिसाब साफ करने लगता है।

प्रश्नकर्ता : नहीं, तो क्या उसे मोक्ष की स्थिति समझना है?

दादाश्री : ज़रूर, ज़रूर। खुद को, खुद का भान हो गया, तो फिर मोक्ष ही हो गया न!

प्रश्नकर्ता : तो परसत्ता से स्वसत्ता में जो आ गया, वह मोक्ष की स्थिति है।

दादाश्री : हाँ, वह स्थिति यानी पहेली ऐसी श्रद्धा बैठती है खुद की, मेरा मोक्ष हो गया है। अब मैं मुक्त हो गया हूँ सबसे, ऐसी श्रद्धा बैठती है। फिर दिनोंदिन विशेष ज्ञान बढ़ता जाता है उसका उसी अनुसार और फिर वर्तन में आता है उतना एक्ज़ेक्ट। एक्ज़ेक्टनेस में आ जाता है।

स्वसत्ता को आवरण रहित कर देते हैं ज्ञानी

प्रश्नकर्ता : यह खुद स्वतंत्र होना, तो वह होने के लिए खुद की स्वतंत्रता है क्या?

दादाश्री : स्वतंत्रता नहीं, उसका रास्ता, वह स्वतंत्रता है। उसका ज्ञान ही स्वतंत्रता है। उस ज्ञान को देखकर चलें, उसके लिए जो रास्ता है, उस पर ज्ञानपूर्वक चलें तो। परंतु ज्ञान के अधीन है, आपके खुद के अधीन नहीं है वह।

प्रश्नकर्ता : अब, वह स्वतंत्र होने के रास्ते का ज्ञान मिलना, वह खुद की स्वतंत्रता है?

दादाश्री : उससे ही पहुँच सकते हैं, वर्ना नहीं पहुँच सकते।

प्रश्नकर्ता : लेकिन क्या वह हाथ में है अपने?

दादाश्री : हाँ, ज्ञानी पुरुष हैं तो सभी सत्ता होती हैं। सारी सत्ता होती हैं।

प्रश्नकर्ता : खुद को नहीं परंतु दूसरे कोई ज्ञानी हों, वे ही स्वतंत्र करवाते हैं, ऐसा हुआ? खुद अपने आप स्वतंत्र नहीं हो सकता न?

दादाश्री : नहीं।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान मिले तब भी? लेकिन ज्ञानी ही चाहिए दूसरे?

दादाश्री : नहीं। ज्ञान के रास्ते से स्वतंत्र हो सकता है। यदि उसे खुद को ज्ञान का रास्ता पता हो आखिर तक का, तो स्वतंत्र हो सकता है। परंतु हो कैसे सकता है? हो जाए तो ज्ञानी हो गया कहा जाएगा।

कृपालुदेव ने लिखा है, 'वे ज्ञानी पुरुष चाहे सो दे सकते हैं'। क्या कहा है?

प्रश्नकर्ता : चाहे सो दे सकते हैं।

दादाश्री : हाँ, सत्ता है। जैसे एक राजा की पावर ऑफ एटर्नी दूसरे को दी हो, तो पावर ऑफ एटर्नी वाला करेगा या नहीं? ऐसे 'सत् पुरुष वे ही देहधारी परमात्मा हैं', ऐसा कहा है कृपालु देव ने।

ज्ञानी पुरुष जो हैं, वे देहधारी परमात्मा कहलाते हैं। उन्हें अपनी सारी भूलें दिखाई देती हैं। अन्य किसी की ज़रूरत नहीं होती भूल दिखाने वाले की। आपकी भूल तो आपको दिखाई ही नहीं देती, आप दूसरों की भूल निकाल सकते हो। दूसरों की भूल निकालना आता है या नहीं? आपकी भूलें दिखाई देती हैं बहुत?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : उसका क्या कारण है? सत्ता में ही नहीं है खुद। खुद की सत्ता में आने के बाद अपनी सारी ही भूलें दिखाई देती हैं।

यानी ज्ञानी पुरुष मिल जाएँ तो हल है, वर्ना हल आए ऐसा नहीं है। इसलिए ज्ञानी पुरुष की ज़रूरत है क्योंकि निमित्त हैं वे। निमित्त बिना तो उपादान जाग्रत नहीं हो सकता। वे निमित्त मिल जाएँ तो उपादान जाग्रत हो सकता है। उपादान तो है ही, भीतर सत्ता तो है ही, परंतु सत्ता को आवरण रहित कौन कर देता है? ज्ञानी पुरुष। उस सत्ता पर से आवरण हटा दिया तो आप अपनी सत्ता में आ गए।

परसत्ता सारी विनाशी, स्वसत्ता अविनाशी

स्वक्षेत्र में आ जाए, स्वद्रव्य में आ जाए तब स्वसत्ता प्राप्त होती है। ये तो परद्रव्य में हैं और परक्षेत्र में हैं। यानी एक बाल जितनी भी सत्ता नहीं है। ये लोग भ्रांति से मानते हैं कि मुझे यह सत्ता है, वह भ्रांति है।

मूल भ्रांति में 'मैं करता हूँ', 'वह करता है' और 'वे करते हैं', यह उसकी बिगिनिंग शुरुआत है भ्रांति की। जबकि ज्योतिर्मय ज्ञान कैसा है, कि 'मैं करता हूँ' ऐसा बोलते तो हैं व्यवहार के लिए, 'वह करता है' ऐसा भी बोलते हैं वे, परंतु वह व्यवहार से बोलते हैं, एक्ज़ेक्ट नहीं बोलते। 'करता ही है', ऐसा नहीं बोलते। व्यवहार की खातिर, भाषा बोलने के खातिर बोलते हैं, क्योंकि कोई करता ही नहीं, इस जगत् में। दूसरी ही सत्ता कर रही है और खुद मानता है कि 'मैं करता हूँ'। परसत्ता का लोगों को पता ही नहीं है न! वे परसत्ता सारी विनाशी होती हैं। स्वसत्ता अविनाशी होती है।

करने की सत्ता नहीं, समझने की सत्ता है

प्रश्नकर्ता : जैसे करने की सत्ता नहीं है, वैसे समझने की भी सत्ता कहाँ है?

दादाश्री : समझने की सत्ता है।

प्रश्नकर्ता : जानने की सत्ता। तो कौन सी? किस तरह?

दादाश्री : समझने की सत्ता सब हैं। मैं समझाने वाला हूँ, तो सामने जो समझता है वह आत्मा वाला है, उसे समझा सकता हूँ, किसी भी व्यक्ति को। उसके भीतर आत्मा होना चाहिए। सबकुछ समझा सकते हैं। समझने की बहुत शक्ति है, जानने की शक्ति है, परंतु करने की सत्ता नहीं है।

ज्ञानी करवाते हैं स्वसत्ता का भान

प्रश्नकर्ता : आपने जो व्यवस्थित कहा है, वही परसत्ता है न?

दादाश्री : व्यवस्थित अलग है। परसत्ता तो, हम जो ये सब करते हैं, वह सब परसत्ता हैं। यानी परसत्ता को हम व्यवस्थित के ताबे में हैं कहेंगे तो चलेगा।

स्वसत्ता स्वरूप की सत्ता है, जबकि ये अन्य सारी, ये सांसारिक कार्य करने की जो सत्ता हैं, वह परसत्ता हैं। परसत्ता और खुद की स्वसत्ता दोंनो अलग ही हैं। परंतु वह भान नहीं हुआ है, मूर्छा में चलता रहता है। उसका भान हम करवाते हैं।

खुद का स्वरूप, आत्मज्ञान जानना है। दूसरी परसत्ता है। आप किसी और की सत्ता में फँसे हुए हो। खुद की सत्ता (उत्पन्न) प्राप्त हो जाए तो पुरुषार्थ उत्पन्न होता है, स्व पराक्रम उत्पन्न होता है। बाकी खाने-पीने की परसत्ता की जंजालें तो हमसे भी लिपटी हुई हैं परंतु हमें स्वसत्ता प्राप्त हो गई हैं। स्व पराक्रम और स्व पुरुषार्थ!

खुद की सत्ता प्राप्त हो जाए तो परमात्म सत्ता प्राप्त हो जाती है और बंधन रहित मोक्ष दशा प्राप्त हो जाती है। मोक्ष में रहें तो बंधन रहित दशा में रहा जा सकता है। उसके बावजूद भी परसत्ता तो रहेगी।

बैठा 'मैं' अब स्वक्षेत्र और स्वसत्ता में

प्रश्नकर्ता : अपनी सत्ता ही नहीं है, तो फिर पुरुषार्थ और पराक्रम रहे ही नहीं न?

दादाश्री : नहीं, सत्ता वह तो किसकी सत्ता? अपनी इस *पुद्गल* में सत्ता नहीं रही, परंतु अपनी खुद की स्वसत्ता तो हाथ में आ गई न अब! पुरुष हुआ इसलिए खुद की स्वसत्ता और खुद के पराक्रम में आ गए, पराक्रम! वह *(पुद्गल)* सत्ता नहीं।

अपना 'मैं' पहले परक्षेत्र में और परसत्ता में था, अब वह 'मैं' स्वक्षेत्र और स्वसत्ता में बैठा इसलिए पुरुषार्थ और पराक्रम की शुरुआत होगी। स्वसत्ता जाग गई तो हो गया, खत्म हो गया। पुरुष और प्रकृति दोनों अलग हो गए, यह पुरुष हो गया। स्वसत्ता में आ जाता है उसके बाद वह भगवान कहलाता है। पुरुष होने के बाद पुरुषार्थ में आता है तब भगवान कहलाता है। जब तक प्रकृति की सत्ता में है तब तक जीव है। प्रकृति नचाए वैसा नाचता है, वह जीव है। प्रकृति अपनी सत्ता में नहीं है। उठना, खाना, पीना सब अपनी सत्ता में नहीं है जबकि पुरुष, वह अपनी सत्ता में है।

जो आदत के अधीन है, वह परसत्ता में है और जो किसी भी आदत के अधीन नहीं है, वह स्वसत्ता में है। आदतें, वे परसत्ता में हैं। स्वसत्ता में आदतें नहीं होती। जिसमें आदत मात्र नहीं है, वह स्वसत्ता है।

जो अबंध है, वह बंधन को जानता है परंतु बंधन पाता नहीं। मोटी रस्सी से या पतली रस्सी से कसकर बांधा गया हो, वह सबकुछ जानता है परंतु खुद बंधन पाता नहीं। जो बंधन पाता है वह जानता नहीं, जो जानता है वह बंधन पाता नहीं। परसत्ता में कहीं भी न जाए वहाँ स्वसता है।

निर्भेल (बिना मिलावट की, शुद्ध) सत्ता आपके पास है और मिलावट वाली सारी परसत्ता हैं। आपके पास निर्भेल सत्ता है जबकि जगत् के पास मिलावट वाली सत्ता है। मिलावट हुई कि कुदरती सत्ता में गया जबकि निर्भेल रहा तो परमात्म सत्ता है। मैं निर्भेल शुद्धात्मा हूँ।

राइट बिलीफ बैठते ही, स्वसत्ता की स्थापना

प्रश्नकर्ता : स्वसत्ता कौन सी, दादाजी? यह समझाने की कृपा करें।

दादाश्री : अब तू वास्तव में चंदू है या शुद्धात्मा है?

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा हूँ।

दादाश्री : तो शुद्धात्मा के भाग को सारी स्वसत्ता कहा है और चंदूभाई के भाग को परसत्ता कहा है। अभी तक 'मैं चंदू' था, वह *पौद्गलिक* सत्ता थी और *पौद्गलिक* सत्ता में ही 'मैं हूँ' ऐसा माना था। अब, वह बिलीफ टूट गई आपकी। वह जो मिथ्यात्व था, वह टूट गया, खत्म हो गया। अब सम्यक् बिलीफ, मैं शुद्धात्मा हो गया। और जिसे यह सम्यक् बिलीफ उत्पन्न हुई वह

स्वसत्ता में है और यह परसत्ता। 'राइट बिलीफ' स्व-सत्ताधारी है और 'रोंग बिलीफ' परसत्ता है।

स्वसत्ता बिलीफ में रहें तब तक क्षायक समकित है। और स्वसत्ता में रहें उतने समय तो भगवान ही है, उसे कोई मना ही नहीं कर सकता। सत्ता का उपयोग किया। क्या?

प्रश्नकर्ता : खुद ने, खुद की सत्ता का उपयोग किया।

दादाश्री : उतने समय परसत्ता में खुद बिल्कुल नहीं होता। जितना उपयोग आत्मा का उतनी सत्ता आत्मा की। पाँच घंटे आत्मा का उपयोग रहा उतना वह स्वसत्ता में रहा। लक्ष तो रहता है परंतु उपयोग जितना रहा उतना स्वसत्ता में रहा। उसके बाद संपूर्ण भगवान हो जाता है।

अब, आप शुद्धात्मा हुए, वह प्रतीति बैठी है, अभी (पूर्ण) हो नहीं गए। वेतन शुद्धात्मा का मिलेगा लेकिन सत्ता नहीं। अब हमेशा के लिए प्रतीति बैठ गई, उसे क्षायक समकित कहते हैं। यह आपकी सत्ता की स्थापना हुई। इन्ट्रिम गवर्मेन्ट हो गई। अब, कब तक इन्ट्रिम गवर्मेन्ट रहेगी? तब कहते हैं, दो काम बाकी रहे हैं, शुद्धात्मा का ध्यान करो और फाइल आए तो फाइल का निकाल करो। आपकी ये फाइलें खत्म हो जाएँगी निकाल करते-करते तब फिर फूल गवर्मेन्ट।

होम डिपार्टमेन्ट, वह स्वसत्ता

प्रश्नकर्ता : हम सांसारिक लोग इसका उपयोग कैसे कर सकते हैं, स्वसत्ता का?

दादाश्री : ज्ञाता-द्रष्टा-परमानंदी रहना है। ये मन-वचन-काया स्वभाव से ही इफेक्टिव हैं। इसलिए सर्दी लगे तो इफेक्ट होता है। गर्मी लगे तो इफेक्ट होता है। इन आँखों से खराब दिखे तो चिढ़ होती है। कानों से खराब सुनें तो असर हो जाता है, इफेक्ट होता है। मन-वचन-काया इफेक्टिव हैं और उस इफेक्ट का असर 'स्व' में नहीं पहुँचता। मानों कि चंदू को इस प्रकार का इफेक्ट हो गया है, ऐसा जाने इतना ही, कि चंदू को सर्दी लग गई है और चंदू अकुलाया है। अकुलाए हुए चंदू को भी हम जानते हैं।

यह फाइल नंबर वन इफेक्टिव है। तो इसके इफेक्ट को हम जानते रहते हैं कि भाई, यह ऐसा चंदू को हुआ है, इस तरह हुआ है। चंदू को ऐसा हुआ है, चंदू को टेन्शन हुआ, वह भी हम जानते हैं। हम जानते रहते हैं।

होम डिपार्टमेन्ट में ही रहना है। फॉरेन में सुपरफ्लुएस रहना है। स्वसत्ता में होम डिपार्टमेन्ट और परसत्ता फॉरेन डिपार्टमेन्ट, रिलेटीव। रिलेटीव, वे सारी परसत्ता कही जाती है। जबकि रियल वह, होम डिपार्टमेन्ट है, स्वसत्ता है।

बात को समझना है। लोग कहते हैं, जल गया, जल गया, जल गया। तब उठकर यहाँ से खाना खाते खाते भागता है। अरे भाई, तेरी मिलकत इस तरफ है मैंने दिखा दी है न, तू उस तरफ क्यों दौड़ रहा है फिर? परंतु वह अनादि का परिचय है न, तो क्या करेगा? यहाँ से खाना खाते खाते दौड़कर जाता है, कि मेरा जल गया, मेरा जल गया। बाद में उसे याद आता है कि दादा ने तो उस तरफ कहा है, हम भूल गए। लाइन ऑफ डिमार्केशन भी डाली हुई है। यह आपका और यह पराया। उधर परसत्ता, यहाँ स्वसत्ता।

हम अपनी बाउन्ड्री में रहें, तो *पुद्गल* की सत्ता बाहर चली जाती है। बाउन्ड्री से बाहर निकलें, फॉरेन में तो वह सारी *पुद्गल* की सत्ता हैं। वहाँ पर वह पकड़ लेता है कि क्यों आए हमारी हद में? खुद इस परसत्ता को समझ जाए और परसत्ता में फिर खुद एकाध जनम तक

दखल न दे तो फिर वह सत्ता ही उसे छोड़ देती है और वह मुक्त हो जाता है, बस। खुद परसत्ता में दखल करता है, इसलिए यह सत्ता उसे पकड़कर रखती है। उसकी सत्ता में लोग दखल करते हैं। दखलंदाज़ी नहीं तो खुद की सत्ता में ही मशगूल।

चंदू से बातचीत, वह है 'आपकी' सत्ता

अब आपकी सत्ता नहीं रही परंतु व्यवहार चलता रहता है न? जब आपकी सत्ता मानते थे तब व्यवहार में दखल करते थे। अब किसलिए? खुद की सत्ता बेहद हैं, तो किसी की सत्ता में क्यों दखल करें?

प्रश्नकर्ता : अपनी सत्ता कितनी?

दादाश्री : पाँच हज़ार रुपये की जेब कट जाए तो फिर आप चंदूभाई से कहना कि कोई हर्ज़ नहीं है, घबराना मत, हम आपके साथ हैं। इस तरह से कंधा थपथपाएँ, वह आपकी सत्ता है। 'हम' अर्थात् खुद स्वयं भगवान हैं, चंदूभाई डिप्रेस हो गए हों तो आप कंधा थपथपा देना। ऐलिवेशन हो रहा हो तो मना कर देना। (तब कहना,) हमारी सत्ता के कारण इतना अधिक प्रभाव पड़ रहा है आपका। होम डिपार्टमेन्ट में बैठे-बैठे फॉरेन का चलाते रहना है। यह निर्लेप ज्ञान है। (बाहर का) असर नहीं करता। जितना करने वाला भाग है, वह परसत्ता है। यह जो ज्ञान है, वह स्वसत्ता है। 'मैं शुद्धात्मा हूँ', वह स्वसत्ता है।

प्रश्नकर्ता : यह बात कौन करता है?

दादाश्री : जो अलग हुआ है वह।

प्रश्नकर्ता : परंतु कौन अलग हुआ?

दादाश्री : जो 'मैं' हूँ वह।

प्रश्नकर्ता : मैं कौन?

दादाश्री : चंदूभाई घबराना मत, हम हैं, यानी भगवान बात करते हैं। यानी प्रतिष्ठित यह तो...

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञा?

दादाश्री : वह... प्रज्ञा है, प्रज्ञा। सिर्फ, वह (आत्मा) परभाव का कर्ता नहीं है, स्वभाव का कर्ता है।

ज्ञायक पद में रहने पर, रह सकते हैं स्वसत्ता में

प्रश्नकर्ता : आत्मा और अनात्मा के संधिस्थान को किस प्रकार से एक नहीं होने देना है?

दादाश्री : अब, आप शुद्धात्मा हो गए और मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार, ये इन्द्रियाँ, विषय, सब कुछ अनात्मा हैं। क्रोध-मान-माया-लोभ सब अनात्मा हैं। आपके भाग में तो सिर्फ शुद्धात्मा है, प्योर, जिसका किसी भी प्रकार का विशेषण नहीं है ऐसा। शुद्धात्मा तो सिर्फ आपको समझाने के लिए कहना पड़ता है मुझे। बाकी विशेषण नहीं, वे भगवान हैं! जबकि इस तरफ सब विशेषण वाले हैं। मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार सभी एक इसी विभाग में आ गए, चंदूलाल के विभाग में। उसमें एकाकर नहीं होने देना है यानी क्या? तब कहते हैं, आप ज्ञाता-द्रष्टा रहो और ये सब ज्ञेय हैं। मन में जो विचार आते हैं, वे ज्ञेय हैं। अच्छे विचार आते हैं, वे भी ज्ञेय हैं, खराब विचार आते हैं, वे भी ज्ञेय हैं। अहंकार बढ़ गया हो, वह भी ज्ञेय है, अहंकार कम हो गया हो, वह भी ज्ञेय है। ये सब ज्ञेय हैं और आप ज्ञायक रहो, तो आत्मा-अनात्मा के संधिस्थान पर रह सकते हो आप। फिर आप फॉरिन डिपार्टमेन्ट में प्रवेश नहीं करोगे, होम डिपार्टमेन्ट में ही रहोगे।

गुणस्थानक (निश्चय का) तो आपको दादा जिसमें हैं वही प्राप्त हुआ है। आपकी भी ऐसी

ही दशा हो गई है लेकिन यह ज्ञान रास्ते चलते मिल गया है इसलिए बाहर धूल उड़ी कि ध्यान वहाँ पर चला जाता है, लेकिन उसे नहीं देखना है। धूल उड़े, कंकड़ उड़े, सबकुछ उड़े लेकिन वे ज्ञेय हैं और आप ज्ञाता हैं। आपको ज्ञाता पद में बैठकर ज्ञेय को जानना है। पूरा जगत् उड़ जाए, माँ-बाप-बच्चे, मृत्यु शैय्या पर हों और वहाँ पर यदि ज्ञेय-ज्ञाता का संबंध रखकर रहोगे तब यह विज्ञान उत्पन्न होगा। उनका मरना भी व्यवस्थित है न!

खुद ज्ञान सत्ता मात्र है। ज्ञाता सत्ता में रहे तो मुश्किलें खत्म हो गई। जितना पूर्वजन्म का अभ्यास उल्टा होगा न, उतना असर होगा।

यथार्थ प्रतिक्रमण से स्वसत्ता का अनुभव

अब आत्मा प्राप्त होने के बाद में क्या? जितना-जितना शुद्ध उपयोग रहेगा, उतनी स्वसत्ता उत्पन्न होगी और संपूर्ण स्वसत्ता उत्पन्न हो गई तो वह भगवान बन गया! *पुद्‌गल* परसत्ता में है, और आत्मा भी, जब तक स्वरूप का ज्ञान नहीं हुआ, तब तक परसत्ता में ही है। ज्ञानी मिल जाएँ और आत्मा स्वसत्ता में आ जाए, उसके बाद *पुद्‌गल* का ज़ोर नरम पड़ता है अथवा वह मृतप्राय हो जाता है। जैसे-जैसे पुरुषार्थ बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे *पुद्‌गल* नरम पड़ता जाता है। एक घंटे शुद्धात्मा पद में बैठकर प्रतिक्रमण करो तो स्वसत्ता का अनुभव होगा।

अब आप तो आत्मा हो गए, इसलिए अंदर का तो पूरा काम हो गया। अब यह अक्रम है न, इसलिए बाहर का काम बाकी रहा है। वह प्रतिक्रमण आपको नहीं करना है, आपको तो जानना है कि चंदूभाई ने किया या नहीं किया। आपको आत्मा को कुछ नहीं करना पड़ता। इसमें आत्मा और इस परसत्ता के, (दोनों के) बीच में प्रज्ञा नामक शक्ति होती है। वह शक्ति यह सारा काम करती है। प्रज्ञाशक्ति का स्वभाव क्या है? साफ-सुथरा करवाकर मोक्ष ले जाने के लिए सारी तैयारी करवाती हैं। सचेत करती है सब कुछ यही करती रहती है और मोक्ष ले जाने की तैयारी करवाती है।

यहाँ से एकावतारी हो सकें, वहाँ तक की यहाँ पर सत्ता होती है अपने इस क्षेत्र में। एक ही अवतार बाकी रहा है वह और मैं तो कहता हूँ, दस बाकी रहे हों तब भी क्या परेशानी है? क्योंकि वे अंतिम दस अवतार तो बहुत वैभव वाले होंगे, ऐसे नहीं होंगे। ऐसे कुरूप जन्म नहीं होंगे, समकित की मुहर लगने के बाद बहुत वैभव वाले होते हैं। यह तो शुक्लध्यान की मुहर लग गई है, यह ग़ज़ब की चीज़ है।

भूल होते ही सचेत करें, 'वह' है स्वसत्ता

प्रश्नकर्ता : रियल-रिलेटीव देखता है वह कौन देखता है? प्रकृति देखती है या आत्मा? वह अपनी स्वसत्ता में आता है?

दादाश्री : वह तो प्रज्ञा देखती है। आत्मा नहीं देखता, प्रज्ञा देखती है और प्रज्ञा देखती है इसलिए आत्मा के विभाग में ही गया।

प्रश्नकर्ता : प्रत्यक्ष स्वसत्ता का माप क्या है या स्वसत्ता की ताकत क्या है, वह प्रत्यक्ष अनुभव में नहीं आता।

दादाश्री : जब भूल होती है और जागृति रहती है न और जो सचेत करती है, वह स्वसत्ता है। अब, रात-दिन भीतर आपको सचेत करती है। वह प्रज्ञा भीतर सचेत करती है। उसे आत्मा कहो या जो कहो, वह कह सकते हो। चेतन सत्ता! प्रज्ञा चेतन सत्ता में आई हुई है। सत्ता चेतन की है। सचेत करती रहती है, सचेत करती है। सचेत करती हैं तुम्हें?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दादा।

दादाश्री : सचेत कौन करता है? तब कहते हैं, चेतन सचेत करता है। किसे सचेत करता है? तब कहते हैं, सचेत होने वाले को सचेत करता है। क्या यह शरीर सचेत होता है? जो सचेत होने वाला है न, उसे ही सचेत करता है।

प्रश्नकर्ता : मूल आत्मा सचेत नहीं करता?

दादाश्री : मूल आत्मा सचेत नहीं करता, यह प्रज्ञा सचेत करती है। आत्मा ही है वह। आत्मा का भाग अलग रहकर काम करता है। मूल आत्मा तो वहीं है, अपने स्वभाव में ही, संपूर्ण है। वह सचेत करने का काम नहीं करता।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह देखने-जानने में रहता है।

दादाश्री : हाँ, फिर वह सचेत करने का काम नहीं करता। अभी वह प्रज्ञा यह काम करती है। आत्मा कब? यह देखना-जानना संपूर्ण हो जाए यानी केवलज्ञान हो जाता है, तब वह मूल आत्मा करता है।

प्रश्नकर्ता : तब आत्मा करता है, अर्थात्...

दादाश्री : उसकी केवलज्ञान की सत्ता। उसके बाद मूल आत्मा और प्रज्ञा उस समय एक ही हो जाते हैं। जब अपनी पूरी रामायण समाप्त हो जाती है, तब वे भी एक हो जाते हैं।

अहंकारी ज्ञान को भी जो ज्ञान जानें, वह स्वसत्ता

प्रश्नकर्ता : 'प्रति क्षण स्वसत्ता में रहकर स्वसत्ता का ही उपभोग करूँ', तो स्वसत्ता तो आपने दे ही दी है, इसका उपयोग किस तरह से करूँ? और परसत्ता में प्रवेश न करूँ तो वह किस प्रकार से? यह विस्तार से समझाइए।

दादाश्री : तमाम क्रियामात्र परसत्ता है। क्रियामात्र और क्रियावाला ज्ञान भी परसत्ता है। जो ज्ञान अक्रिय है, ज्ञाता-दृष्टा और परमानंदी है। जो इस सारी क्रिया वाले ज्ञान को जानता है, वह अपनी स्वसत्ता है और वही 'शुद्धात्मा' है।

प्रश्नकर्ता : 'तमाम क्रियाएँ मात्र परसत्ता हैं। क्रिया वाला ज्ञान वह भी परसत्ता है। क्रिया वाले ज्ञान को जो ज्ञान जानता है, वह स्वसत्ता है, वह शुद्धात्मा है'। तो इसमें जो मोची का ज्ञान है, उस ज्ञान को जो जानता है, वह स्वसत्ता हुई?

दादाश्री : उस ज्ञान को जानने वाला अहंकार है।

प्रश्नकर्ता : तो मोची के इस तमाम ज्ञान को जानने वाला अहंकार है?

दादाश्री : मोची का जो ज्ञान हुआ है, उस ज्ञान को जानने वाला कौन है? तो कहते हैं, बुद्धि। बुद्धि अर्थात् मालिक कौन? तो कहते हैं, अहंकार।

प्रश्नकर्ता : अत: इसमें मोची को जो ज्ञान उत्पन्न हुआ है, उससे वह मोची की क्रिया कर सकता है, वह मोची की क्रिया जिस ज्ञान के आधार पर होती है...

दादाश्री : उसे अहंकार जानता है और अहंकार को स्वसत्ता जानती है। इस अहंकारी ज्ञान को स्वसत्ता जानती है।

प्रश्नकर्ता : तो यह मोची का ज्ञान, वकालत का ज्ञान, डॉक्टरी का ज्ञान, वह सब अहंकारी ज्ञान है?

दादाश्री : वह अहंकारी है।

प्रश्नकर्ता : और जो उस अहंकार को भी जानता है, वह स्व है?

दादाश्री : अहंकार को भी जो जानती है, वह स्वसत्ता है।

जितने केवल के अंशो की पूंजी, उतनी सत्ता

एक समय भी स्वसत्ता में आ गया, वह परमात्मा हो गया।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् सम्यक् दर्शन आ गया न?

दादाश्री : वह तो सब कुछ आ गया। स्वसत्ता अर्थात् सम्यक् दर्शन भी आ गया और क्षायक दर्शन भी आ गया। स्वसत्ता में सब कुछ आ गया।

प्रश्नकर्ता : जब ज्ञान-दर्शन-चारित्र की एकता हो, तभी स्वसत्ता में आता है न?

दादाश्री : ज्ञान-दर्शन-चारित्र और तप, ये चारों ही स्तंभ वेदन में आते हैं तब स्वसत्ता में होते हैं। वेदन में आने चाहिए। यानी इस शुद्धता से वे वेदन में ही आ गए, वेदन अर्थात् स्वसत्ता कहा जाता है। वर्ना फिर वेदन में क्या होता है? मिथ्या ज्ञान, मिथ्या दर्शन, मिथ्या चारित्र और मिथ्या तप वे अभी (अज्ञानी के) वेदन में है।

आत्मा का वेदन अर्थात् अनुभव हो गया, ऐसा कहा जाता है। आत्मा का जिसे वेदन है और *लक्ष* बैठ गया है, उसे रात को जागते ही 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा भान उत्पन्न होता है। नींद से जागता है और भान उत्पन्न होता है, वह वास्तविक भान है और उसे अनुभव कहा जाता है, आत्मानुभव कहा जाता है। हमारा स्पष्ट वेदन, स्पष्ट अनुभव, जबकि आपका अस्पष्ट वेदन। स्पष्ट वेदन अर्थात् खुद को सब कुछ बिल्कुल अलग ही दिखाई देता है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् जब केवलज्ञान होता है तब परमात्मा पद में आता है?

दादाश्री : यह शुद्धात्मा पद प्राप्त होता है, उसके बाद केवलज्ञान के अंशों की शुरुआत होती है।

यह शुद्धात्मा पद, यह तो आपसे ऐसा कहता है कि आज आपसे किसी को नुकसान हो गया, तो उसके खेद में मत पड़ो। किसी को आपसे फायदा हो गया, तो उसके विचार में मत पड़ो कि मैंने कैसा फायदा किया या ऐसा-वैसा सब। आप शुद्ध ही हो। राग-द्वेष रहित हो। किसी पर राग नहीं या द्वेष नहीं, ऐसा यह शुद्धात्मा पद है। शुद्धात्मा पद में आ जाने के बाद केवलज्ञान के अंशों का ग्रहण होता है। वे केवलज्ञान के कुछ अंश ग्रहण हो जाने के बाद आत्मा बिल्कुल अलग ही दिखाई देता है, कुछ भाग आ जाने के बाद। उसके बाद सर्वांश होता है अर्थात् एब्सल्यूटिज़म में आ जाता है। एब्सल्यूट केवलज्ञान! वह परमात्म पद है।

हम सभी परमात्मा हैं, ऐसा *लक्ष* बैठा है इसलिए अब धीरे-धीरे श्रेणियाँ चढ़ते हैं सभी (आत्मज्ञान प्राप्त महात्मा)। उससे सत्ता प्राप्त होती रहती है। जब से शुद्धात्मा का *लक्ष* बैठता है, वहाँ से श्रेणी की शुरुआत होती है। उसके बाद आगे-आगे अनुभव होता ही रहता है, स्टेप बाय स्टेप, स्टेप बाय स्टेप (सीढ़ी दर सीढ़ी), विशेष अनुभव, विशेष। श्रेणी की शुरुआत होने पर दिनोंदिन, क्रमशः बढ़ता ही जाता है। आपके केवलज्ञान के अंश इकट्ठें होने लगे हैं और जितने अंश इकट्ठें होते जाते हैं उतनी उसकी सत्ता प्रकट होती जाती है।

केवलज्ञान देते हैं, इसलिए सत्ता अलग हो जाती है

यह तो आपको एक घंटे में बारहवें गुणस्थानक में बैठा दिया है और फिर मैं भी बारहवें में आप सबके साथ बैठा हूँ। मैं कोई तेरहवें में नहीं बैठा हूँ। तेरहवें गुणस्थानक में केवलज्ञान होता है और चौदहवें में मोक्ष होता है।

प्रश्नकर्ता : इस काल में केवलज्ञान तो संभव नहीं है न?

दादाश्री : नहीं, संभव नहीं है। केवलज्ञान, कारण केवलज्ञान हमें हुआ है, कार्य केवलज्ञान नहीं हुआ इसलिए तो हम यह शिक्षक के तौर पर रहे न! वर्ना हम शिक्षक के तौर पर नहीं होते न! और यह अक्रम निकला, केवलज्ञान की सत्ता प्राप्त करे ऐसा! मैं देता हूँ आपको केवलज्ञान, परंतु इस काल में पचता नहीं है। मुझे नहीं पचा तो आपको भी नहीं पचेगा न! मैं देता हूँ केवलज्ञान। अत: इस काल में अक्रम मार्ग आपको प्राप्त हो गया है।

प्रश्नकर्ता : परंतु वह केवलज्ञान हुआ होता तो यह...

दादाश्री : तो यह स्कूल, नहीं होता।

इस काल में तीन सौ साठ डिग्री का मैं ज्ञान देता हूँ, केवलज्ञान आपके हाथ में देता हूँ परंतु वह पचता नहीं है और मुझे भी नहीं पचा, काल के कारण। इस काल की विचित्रता के कारण केवलज्ञान नहीं पचा। वह मुझमें तीन सौ छप्पन डिग्री पर आकर खड़ा रहा। जबकि मैं देता हूँ केवलज्ञान। यदि केवलज्ञान नहीं दूँगा तो सत्ता अलग होगी ही नहीं।

थिअरम् ऑफ एब्सल्यूटिज़म में दादाश्री

स्वसत्ता परसत्ता में बिल्कुल प्रवेश न करे, उसे 'एब्सल्यूटिज़म' (केवल) कहते हैं। स्वसत्ता परसत्ता में प्रवेश करने जाए वह थिअरम् ऑफ रियालिटी (निरपेक्षवाद) है और सिर्फ परसत्ता में ही बरतती हैं, वह थिअरम् ऑफ रिलेटिविटी (सापेक्षवाद) है।

ये सभी महात्मा बैठे हैं, ये कौन सी थ्योरी में है? थ्योरी ऑफ रियालिटी में है और मैं (दादा) थ्योरी नहीं, थिअरम् में है। रियालिटी की थ्योरी में आ गया तो फिर एब्सल्यूटिज़म में प्रवेश करते रहेगा। जबकि मैं थ्योरी ऑफ एब्सल्यूटिज़म में हूँ। थ्योरी नहीं लेकिन थिअरम् में हूँ।

प्रश्नकर्ता : यानी इस रियल पर भी अभी एक निरालंब की सीढ़ी बाकी है ना? एब्सल्यूट की सीढ़ी बाकी है ना?

दादाश्री : आपने इस मोक्ष के दरवाज़े में प्रवेश कर लिया है तो अब क्यों परेशान हो रहे हो? दरवाज़े में कौन प्रवेश करने देगा? कोई बाप भी लाख जन्मों तक प्रवेश नहीं करने देगा। प्रवेश कर लिया है तो उसका आनंद मनाओ न! फिर एक पद बाकी रहा है तो क्या उसकी चिंता करनी है? आपको कैसा लगता है?

प्रश्नकर्ता : समझने के लिए पूछा है।

दादाश्री : हाँ। अपने आप को धन्य मानो, हाँ। 'धन्य है मुझे कि मोक्ष के दरवाज़े में प्रवेश कर लिया है', ऐसा धन्य मानो। दूसरा यह है कि यदि मन पर आगे की बात का बोझ रखोगे न तो मन में ऐसा रहा करेगा कि हमें वह पद नहीं मिला है, वह पद नहीं मिला है।

प्रश्नकर्ता : दादा, उस बोझ को हल्का करने के लिए आपसे प्रार्थना की है।

दादाश्री : वह ठीक है। आपको बोझ नहीं रखना है। वह तो अपने आप ही सामने आकर रहेगा अब। इन आज्ञाओं का पालन करोगे न, तो वह पद सामने आ जाएगा। मुझे स्पष्ट कह देना चाहिए न, कि यह क्या है! करेक्टनेस तो आनी चाहिए न! केवलज्ञान! एब्सल्यूट! फॉरेन वाले समझते हैं एब्सल्यूट को। अत: हमने फॉरेन वालों को लिख दिया है कि 'हम थ्योरी ऑफ एब्सल्यूट में नहीं हैं, थिअरम ऑफ एब्सल्यूटिज़म में हैं'। थिअरम अर्थात् उसके अनुभव में ही हैं।

प्रश्नकर्ता : संपूर्ण जागृति, उसे ही केवलज्ञान कहते हैं?

दादाश्री : संपूर्ण। और अभी जो आपकी जागृति बढ़ी है वह संपूर्ण होने की तैयारी कर रही है। संपूर्ण जागृति को ही निरालंब कहते हैं।

केवल के अंश प्राप्त होते ही, खत्म अंतरदाह

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, अंतरदाह खत्म हो गया है, सही बात है, मैं कबूल करता हूँ, परंतु केवलज्ञान प्राप्त करने का अंतरदाह जग रहा है, उसका अब क्या करना है?

दादाश्री : अब वह अंतरदाह उत्पन्न होता है न! क्योंकि वह (पुराना) व्यापार बंद हो गया, अब नया व्यापार शुरू हो गया। व्यापार में ज़्यादा फायदा हो, ऐसी भावना तो अंदर होती है न! अत: केवलज्ञान के सारे अंश जमा हो रहे हैं, जितनी मात्रा में आपका पुरुषार्थ। पुरुषार्थ किसे कहते हैं? जितनी जागृति और जितनी हमारी आज्ञा पालन करो, वह पुरुषार्थ धर्म है, उतने केवलज्ञान के अंश भीतर जुड़ते जाते हैं। जब वे केवलज्ञान के अंश संपूर्ण हो जाते हैं, तीन सौ साठ अंश हो जाते हैं तब केवलज्ञान संपूर्ण होता है। तब तक आंशिक केवलज्ञान कहा जाता है। आंशिक केवलज्ञान है, ऐसा खुद को पता चलता है कि मुझे आंशिक केवलज्ञान है।

केवलज्ञान के अंशों की शुरूआत हो जाती है तभी अंतरदाह खत्म होता है, वर्ना अंतरदाह खत्म नहीं होता। अंतरदाह ऐसा है कि कभी खत्म नहीं होता। दसवें गुणस्थानक में भी अंतरदाह की जलन होती रहती है, सूक्ष्म मात्रा में। उसकी बहुत कम मात्रा होती है। जितने उसे कषाय हों न, उतनी मात्रा में। वे अल्प कषाय होते हैं वहाँ पर, सूक्ष्म कषाय, दसवें गुणस्थानक में। सबसे अंतिम लोभ, सबसे छोटे प्रकार का लोभ, वह दसवें गुणस्थानक में। तब तक भीतर यह दखल है।

समझ डेवेलप होकर, परिणाम पाए सत्ता के रूप में

सत्ता प्राप्त हो जाए, ऐसा है और पूर्ण हो जाए, ऐसा है, यदि आप हमारे कहे अनुसार चलो तो। करना कुछ भी नहीं है, समझना ही है। जहाँ करना है वहाँ जेल में जाना पड़ेगा। जहाँ-जहाँ करना है वह जेल है और जहाँ समझना है वहाँ मुक्त!

हमारा ज्ञान जानना है, करना नहीं है। सिर्फ समझना ही है। कोई कहेगा कि मैं यहाँ हूँ और अब दिल्ही कैसे पहुँच पाऊँगा? तू बात को समझ ले तो दिल्ही पहुँच पाएगा। करना कुछ भी नहीं है। यहाँ से मोक्ष तक का मार्ग है, वह चलने के लिए नहीं है। मोक्ष को तू समझ ले, तो यहीं पर मोक्ष है।

अत: समझने की ज़रूरत है। हमारे साथ बातचीत करते-करते आपको समझ मिलती जाएगी, समझ में आ जाएगा। ज्ञान तो हम एक बार देते हैं, उसके बाद ज्ञान नहीं देते, हम समझाते हैं। ज्ञान हम एक बार क्यों देते हैं क्योंकि वह ज्ञान ही क्रियाकारी ज्ञान है। अत: वही क्रिया करता रहता है। आपके हाथ में नहीं रही फिर सत्ता। वह सटीक आपके साथ ही साथ आगे-आगे काम करता रहता है। ज्ञान नहीं पचता। ज्ञान कैसे पचेगा? समझ पचती है।

यह तो सटीक कहलाता है इसलिए हमारे साथ बैठे रहना है, समझ-समझ करते रहना है। अब इस समझ को दर्शन कहा जाता है, केवलदर्शन। समझ को इतना समझ लेना है कि आपका केवलदर्शन आ जाए, सब कुछ समझ में आ ही जाए। कहीं भी आपको पज़ल खड़ा न हो।

अब वे कहेंगे कि समझ हैं हमारे पास पर ज्ञान कब प्राप्त करेंगे हम? तब कहेंगे, नहीं, समझ का स्वभाव ही खुद ऐसा है कि समझ डेवेलप होते-होते ज्ञान के रूप में परिणमित होती है खुद ही। जितनी समझ मैं आपको देता हूँ वह सारी डेवेलप होती रहती हैं और वह खुद ही सत्ता के रूप में परिणमित होती है। समझ, वह बीज के रूप में है और ज्ञान, वह वृक्ष के रूप में है। आपको पानी का छिड़काव और इत्यादि भावनाएँ करनी चाहिए।

अब, समझ ज्ञान में परिणमित हुई उसका प्रमाण क्या? जितना वर्तन में आया उतना प्रमाण। वर्तन में न आए तब तक ज्ञान परिणमित नहीं हुआ। समझ है परंतु (ज्ञान) परिणमित नहीं हुआ। यानी वर्तन में लाने की ज़रूरत नहीं है। वर्तन, वह उसका फल है। समझ ज्ञान में परिणमित हुई कि वर्तन में आकर रहेगी। वर्तन में आकर रहेगा तभी ज्ञान में परिणामित हुआ ऐसा कहा जाएगा। जितना हमारे वर्तन में आ गया है उतना हमारे ज्ञान में परिणमित हो गया है जबकि आपका वर्तन में आना बाकी है।

प्रश्नकर्ता : इसलिए उसे चारित्र कहा जाता है न?

दादाश्री : चारित्र कहा जाता है। परंतु सम्यक् चारित्र कहा जाता है, केवलचारित्र नहीं कहा जाता। केवलचारित्र तो केवलज्ञानी ही करवा सकते हैं और ज्ञानी पुरुष भी कर सकते हैं। केवलचारित्र भी जितने केवल के अंश हैं, उतने वे भी कर सकते हैं। केवलज्ञान के अंश, हम ज्ञान देते हैं, तभी से शुरुआत हो जाते हैं सभी में।

कर्ज़ चुकाने के बाद ही संपूर्ण सत्ता का अनुभव

केवलज्ञान इस काल के कारण छूकर वापस चला गया। केवलज्ञान है इतना ही, परंतु जितना पाचन होता है उतना दिखाई देता है। हमें जितना पाचन हुआ उतना दिखाई दिया और पाचन नहीं हुआ तब भी क्या परेशानी है? आपकी स्वतंत्रता आ गई है, इतनी स्वसत्ता है, इतनी परसत्ता है, वह समझ में आ गया है।

पराई सत्ता से स्वतंत्र हो गया उसके बाद इस मज़े और आनंद की तो बात ही अलग है न! आपने चखा न थोड़ा-थोड़ा?

प्रश्नकर्ता : वह आनंद चखाया है आपने।

दादाश्री : हाँ, यानी थोड़ा-थोड़ा चखा है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, चखा है।

दादाश्री : वह स्वसत्ता प्राप्त होने के बाद कितना भीतर, उसकी विपुलता कितनी दिखाई देती है! उसकी सत्ता कितनी अच्छी दिखाई देती है!

प्रश्नकर्ता : हाँ...

दादाश्री : जो सत्ता आपने नहीं देखी थी वह सत्ता देखी आपने!

प्रश्नकर्ता : वह देखी है और दादा, अभी तो दादा का ज्ञान कुछ अंश ही परिणमित हुआ है फिर भी इतना अधिक आनंद, फिर भी इतना अधिक उल्लास रहता है।

दादाश्री : हाँ, तो जैसे-जैसे बढ़ेगा वैसे-वैसे...

प्रश्नकर्ता : तब वह जैसे-जैसे बढ़ेगा उस समय क्या?

दादाश्री : कहाँ जाकर पहुँचेगा!

प्रश्नकर्ता : उस स्वसत्ता का अनुभव करवाईए न!

दादाश्री : अभी नहीं हो सकता। कर्ज़ बेहद है! कर्ज़ चुकाए बगैर सत्ता उत्पन्न नहीं हो सकती न! कर्ज़ चुका देना चाहिए। कर्ज़ चुका दो। फाइलें खत्म हो जाएगी तो काम पूरा हो जाएगा। अपने हाथ में सत्ता आ जाएगी। ज्ञान-दर्शन-चारित्र और तप पूर्ण हो जाएँगे।

जितनी सत्ता आपमें उत्पन्न हो गई है उसे देखो तो भी बहुत हो गया। आपमें कितनी सत्ता उत्पन्न हुई और उस सत्ता में क्या दिखाई देता है बाहर, क्या असर होता है सभी पर, इतना देखो तो भी बहुत हो गया। आप ऐसा जान लो कि अभी पाँच सीढ़ी पर इतनी अधिक सत्ता है तो फिर दस पर तो कितनी सत्ता आ जाएगी!

हम सभी बोलते हैं कि 'मैं परम ज्योतिस्वरूप सिद्ध भगवान हूँ'। हमें सत्ता प्राप्त हो गई है इसीलिए ही। जबकि बाहर के लोगों को उनकी खुद की सत्ता का भान ही नहीं है। ज्ञानी की उपस्थिति में, ज्ञानी की आज्ञा से ही ऐसा बोला जा सकता है, उसके बिना बोल ही नहीं सकते, बड़ी ज़ोखिमदारी आ जाती है।

यह ज्ञान लेने के बाद बाहर का तो आप देखोगे वह अलग बात है, पर आपके ही अंदर का आप सब देखा करोगे, उस समय आप केवलज्ञान सत्ता में होंगे, पर अंश केवलज्ञान होता है, सर्वांश नहीं।

एक शब्द से नहीं होता वर्णन, सत्ता का

प्रश्नकर्ता : इस शुद्ध उपयोग में जो रह पाते हैं, आप शुद्ध उपयोग में रहते हैं, उसे सत्ता में रहे ऐसा कहा जाएगा?

दादाश्री : सत्ता अलग है और शुद्ध उपयोग अलग है।

किसी राजा की सत्ता तय करें कि भाई, इतनी राजा की सत्ता है और राजा किसी पर आदेश करे, वह आदेश करे उतनी सत्ता नहीं है, उसकी सत्ता तो सत्ता है, सत्ता के रूप में ही है। यानी इसमें अन्य किसी एक शब्द से उसकी सत्ता पूर्ण नहीं होती। उसकी सत्ता, पूर्ण सत्ता है। कोई कुछ न कर सकें, सभी तरह से स्वतंत्र...

प्रश्नकर्ता : जिससे उसका वह राजापना रहता है।

दादाश्री : हाँ, राजापना में इतनी सत्ता होती है। जितनी सत्ता का वह उपयोग करता है उतनी सत्ता नहीं, बेहद सत्ता होती है!

सत्ता यानी आत्मा की उपस्थिति

सत्ता स्वरूप जिसकी सत्ता ही चल रही है ऐसा आत्मा। केवलज्ञान स्वरूप से, एब्सल्यूट!

प्रश्नकर्ता : सत्ता स्वरूप यानी कैसी सत्ता?

दादाश्री : जिसकी सत्ता से यह सब हो रहा है वह।

प्रश्नकर्ता : क्या हो रहा है?

दादाश्री : संसार चल रहा है।

प्रश्नकर्ता : उसकी सत्ता से चल रहा है?

दादाश्री : तो और क्या? सत्ता न हो तो नहीं हो सकता, वह कर्ता नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो?

दादाश्री : सत्ता है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात्?

दादाश्री : वह (आत्मा) है तो यह (सत्ता) है, वर्ना नहीं होती।

प्रश्नकर्ता : अभी व्यवहार सारा चल रहा है, आत्मा सत्ता में ही है इसमें, यह क्या कहना चाहते हैं? आत्मा, वह सत्ता में है यानी कि अभी आत्मा की सत्ता से यह सारा व्यवहार चल रहा है?

दादाश्री : हाँ, तो और किसकी सत्ता है?

प्रश्नकर्ता : वह सत्ता शब्द और यह व्यवहार चलाना, इन दोनों में ज़रा मेल नहीं बैठता।

दादाश्री : चलाने में सत्ता, वह कोई आदेश करने की सत्ता नहीं है। उस सत्ता को अपनी भाषा में समझे हैं।

प्रश्नकर्ता : हाँ, तो क्या कहना चाहते हैं सत्ता यानी?

दादाश्री : सत्ता यानी वही है, वही हेड है, उसे जो मानो वह, उसी की उपस्थिति है। सत्ता का अर्थ यह नहीं कि आदेश दें इस तरह, मेरा कहा क्यों नहीं मानता? सभी खुद की सत्ता में रहे हुए हैं। किसी के उसमें, दबाव में रहे, ऐसे नहीं हैं।

आत्मा ने नहीं छोड़ी कभी खुद की सत्ता

प्रश्नकर्ता : तो अभी अज्ञानी का भी आत्मा उसकी सत्ता में रहा हुआ है ऐसा है क्या?

दादाश्री : हाँ, वह भी सत्ता में रहा हुआ है। खुद की सत्ता में ही रहा हुआ है आत्मा।

प्रश्नकर्ता : अज्ञानी को ऐसा भान होता है न, कि यह जो किया, वह 'मैंने किया', तो इसमें सत्ता चीज़ कहाँ आयी?

दादाश्री : आत्मा तो उसकी सत्ता में ही है यानी उसे कुछ नहीं हुआ। ऐसा बाहर तो बहुत कुछ हुआ, परंतु उस (आत्मा) का खुद का कुछ नहीं हुआ। यह तो समुद्र, समुद्र की स्टेज (अवस्था) में है, सूर्य सूर्य की स्टेज में है। इस भाप की ही झंझट हैं ये सब और खुद भाप (की स्टेज) में शोर मचाता रहता है। अरे, तू भाप नहीं है, तू आत्मा है! तब उसे भान हो तो फिर से फिट हो जाए। यह तो, भीतर से वृत्तियाँ अलग हो गई हैं। मान्यता रोंग हुई है, वृत्तियों की, आत्मा की नहीं।

प्रश्नकर्ता : इसमें जो सूर्य की उपस्थिति कही, समुद्र की उपस्थिति कही, परंतु सूर्य का प्रकाश वह यहाँ तक पहुँचता है समुद्र में, ऐसा इसमें मूल आत्मा का कुछ होता है इस व्यवहार में?

दादाश्री : वह तो, ऐसा तो है ही न, ऐसा इसका प्रकाश तो है ही न!

प्रश्नकर्ता : तो वह प्रकाश, श्रद्धा... मान्यता के स्वरूप में? वह बिलीफ स्वरूप होता है क्या?

दादाश्री : वह तो, अलग ही हैं वे दोनों। सूर्य, वह इस रूप नहीं होता, समुद्र रूप होता ही नहीं कभी भी। सूर्य, सूर्यरूप ही रहता है और समुद्र समुद्रपना नहीं छोड़ता, अपनी-अपनी स्वसत्ताओं में हैं सभी। खुद की सत्ता नहीं छोड़ते। चाहे कितना भी सामने वाले का इफेक्ट (प्रभाव) हो, सामने वाले का दबाव हो, परंतु अपनी खुद की सत्ता नहीं छोड़ते। सूर्य, सूर्यरूप ही रहता है और समुद्र, समुद्ररूप ही रहता है। भले ही भाप वह सब...

प्रश्नकर्ता : और जब तक रहता है तब तक उसका प्रकाश देता ही रहता है।

दादाश्री : हाँ, देता ही रहता है।

प्रश्नकर्ता : इसलिए इस प्रकाश को सत्ता कह रहे हो? सत्ता स्वरूप से रहा हुआ है वह प्रकाश स्वरूप से रहा हुआ है, ऐसा है क्या?

दादाश्री : नहीं, नहीं।

प्रश्नकर्ता : तो?

दादाश्री : अपनी सत्ता नहीं छोड़ता, वह सूर्य, सूर्य ही रहता है। आप चाहे कितना भी दखल करो फिर भी। उससे लोग मशीनरी चलाते हैं, उससे लोग उर्जा लेते हैं, उससे बड़े-बड़े रसोईघर चलाते हैं, परंतु सूर्य को उससे कुछ भी लेना-देना नहीं है। वह सूर्य तो सूर्य के रूप में ही है। उसकी अपनी खुद की सत्ता छोड़कर कुछ नहीं किया है।

प्रकाश देने वाला नहीं, 'खुद' ही प्रकाश स्वरूप

प्रश्नकर्ता : वह कहते हैं न, चोर को चोरी करनी हो तो भी प्रकाश देता है, दानेश्वरी को दान देना हो तो भी प्रकाश देता है। वह प्रकाश देना, उसे सत्ता कही?

दादाश्री : नहीं।

प्रश्नकर्ता : वह भी नहीं।

दादाश्री : वह प्रकाश स्वाभाविक रूप से ही होता है। सत्ता यानी तो फिर से कर्ता हुआ वह, क्रियाकारी हुआ। प्रकाश देता है यानी क्रिया...

प्रश्नकर्ता : प्रकाश देता है, ऐसा आपने कहा यानी क्रियाकारी हुआ?

दादाश्री : नहीं, यानी देता नहीं है न, स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होता है।

प्रश्नकर्ता : तो वह प्रकाश उपस्थित ही रहता है वहाँ, ऐसा?

दादाश्री : हाँ। वह तो लोगों से ऐसा कहना पड़ता है, वह प्रकाश देता है। वह उसके प्रकाश में काम करता है। बाकी देने वाला होता तब तो फिर से कर्ता हो जाता।

प्रश्नकर्ता : यानी देने वाला नहीं है, परंतु खुद प्रकाश स्वरूप है इसलिए उसे प्रकाश का लाभ मिलता है, चोरी करने वाले को।

दादाश्री : बस, बस, बस। सूर्यनारायण नहीं आते, तब तक मैं इस पर्दे को नहीं खिंचता, परंतु जब आ जाते हैं तो पर्दा खिंच लेता हूँ, इसलिए क्या सूर्य की सत्ता खत्म हो गई? नहीं, सूर्य की सत्ता खत्म नहीं हुई, हमारे यों पर्दा बंद करने से। वह तो अपनी खुद की सत्ता में ही है। आपको अनुकूल नहीं आता उससे हमें क्या लेना-देना? किसी को अनुकूल आता है किसी को अनुकुल नहीं आता, हमें कुछ भी लेना-देना नहीं है आपसे। हम अपनी सत्ता में हैं।

अहंकार बिल्कुल ही सत्ता रहित

सूर्य और समुद्र, ये दोनों चाहे कितने भी मिलते हों, परंतु कोई अपनी खुद की सत्ता नहीं छोड़ता। कोई कुछ नहीं कर सकता दोनों का। लोग ऐसा समझते हैं कि सूर्य आया इसलिए समुद्र में भाप उत्पन्न हुई, परंतु वह लोगों की दृष्टि से।

प्रश्नकर्ता : तो यह भाप उत्पन्न हुई, वह किसकी सत्ता कही जाएगी?

दादाश्री : किसी की सत्ता नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो वह बीच वाली, वह कहाँ बैठती है वह चीज़?

दादाश्री : वह तो साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स है। सत्ता इसमें किसी की आई ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन इसमें जो अहंकार है, वह उस सत्ता वाला है तो सही न?

दादाश्री : किसी की भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : यानी स्वाभाविक सत्ता नहीं है परंतु यह कर्तापना की सत्ता वाला है तो सही न अहंकार?

दादाश्री : किसी भी प्रकार की सत्ता नहीं है, अहंकार में सत्ता ही नहीं है। बिल्कुल सत्ता रहित यदि कोई है तो वह अहंकार ही है।

प्रश्नकर्ता : क्योंकि मूल वस्तु नहीं है न!

दादाश्री : (अहंकार) मूल वस्तु नहीं है न! भूत है बस, अहंकार नामक भूत उत्पन्न हुआ है बस। करता कोई और है और कहता है, कि 'मैं करता हूँ' बस।

प्रश्नकर्ता : यह तो एक नया *(इदंतृतीयम)* तीसरा कुछ उत्पन्न हो गया है।

दादाश्री : हाँ, नया तीसरा उत्पन्न हो गया...

प्रश्नकर्ता : इसे ही अपनी खुद की सत्ता का भान होता है, इसलिए मोक्ष जाता है फिर?

दादाश्री : सत्ता उसकी है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : तो फिर?

दादाश्री : खुद का भान होता है कि 'मैं कुछ हूँ ही नहीं।' इसलिए गिर जाता है।

प्रश्नकर्ता : तो इसमें 'मैं हूँ ही नहीं', परंतु यह 'मैं हूँ...'

दादाश्री : वह 'मैं हूँ' बाद में रहा है, जो रहा है वह सब 'मैं हूँ'।

प्रश्नकर्ता : तो आत्मा के विभाग में आ गया वह?

दादाश्री : मूल विभाग, मूल जगह पर उसकी श्रद्धा बैठी, अभी आ नहीं गया है।

प्रश्नकर्ता : श्रद्धा बैठी।

अहंकार विलय होते ही, खत्म 'अज्ञा' की सत्ता

प्रश्नकर्ता : वह अहंकार छूट जाए तो खुद मूल वस्तु में आ जाएगा ऐसा कहा, तो वह मूल वस्तु से अलग हो गया था ऐसा भी कह सकते हैं न?

दादाश्री : नहीं, वह अलग हो गया था, ऐसा कुछ नहीं है। अलग हो गया था या ऐसा हो गया था ऐसा नहीं है। ये सब जो रोंग बिलीफें थी, वे खत्म हो गई। 'मैं चंदूभाई हूँ' 'जिसे' ऐसा भान था, मैं उसका वह भान छुड़वा देता हूँ और 'मैं शुद्धात्मा हूँ' उसे ही यह भान हो जाता है। जो सूक्ष्मतम अहंकार है, जिसका फोटो नहीं लिया जा सकता, जो आकाश जैसा है, उसे यह अनुभव होता है। अतः वह अहंकार ही अनुभव करने वाला है। उसके बाद अहंकार विलय हो जाता है और फिर 'प्रज्ञा' उत्पन्न होती है। 'अज्ञा' की सत्ता चली जाती है।

प्रश्नकर्ता : अनुभव प्राप्त करने वाला और अनुभव को देखने वाला, ये दोनों अलग हैं या एक ही हैं?

दादाश्री : दोनों एक ही हैं। जिसने देखा वह एक है और जिसने प्राप्ति की वह एक, दोनों एक ही हैं। अहंकार को यदि अनुभव नहीं हुआ होता तो वह कहता कि, 'मुझे अनुभव नहीं हुआ है' और अनुभव हो जाने पर वह प्रज्ञा को सत्ता सौंप देता है कि, 'यह आपकी गद्दी'। जिसने अनुभव प्राप्त किया और जिसने अनुभव को देखा, वे दोनों एक ही हैं!

निर्जीव अहंकार विलय होता है, वैसे-वैसे सत्ता प्रकट होती है

प्रश्नकर्ता : दादाजी, अब एक तरफ आत्मा

है वह तो ज्ञानस्वरूप है या तो उसकी खुद की सत्ता में है। अब, एक यह अहंकार उत्पन्न हो गया है। अब जो कुछ हो रहा है वह सब अहंकार को हो रहा है और अहंकार तो कोई चीज़ नहीं है। तो आपने अभी हमें समझाया कि यह तू गलत है, यह तू नहीं है परंतु आत्मा तो ऐसा नहीं मानता कि यह मैं हूँ।

दादाश्री : नहीं, आत्मा को मानने का प्रश्न ही नहीं उठता है। आत्मा तो बीच में उदासीन ही है।

प्रश्नकर्ता : फिर तो मुझे यही कहना है कि अब जैसे अहंकार कम होता जाएगा वैसे आत्मा का प्रकाश खुलता जाएगा। इस क्रिया में और कुछ नहीं है।

दादाश्री : हाँ, बस।

प्रश्नकर्ता : अत: वास्तव में अहंकार जैसे विलय हो जाए, तो अहंकार चीज़ ही ऐसी है कि उसके अनुभव का प्रश्न ही कहाँ उठता है?

दादाश्री : नहीं। एक अहंकार तो गया, जीवित अहंकार गया। अब वह निर्जीव अहंकार बाकी रहा है तो यह...

प्रश्नकर्ता : अहंकार कम हो जाए तो आत्मा का ज़ोर बढ़ता है, बस इतनी ही बात है न?

दादाश्री : निर्जीव अहंकार जो भी ऐसा है, उस उदयकर्म को देखें तो वह विलय होता जाता है। बस हस्ताक्षर करके चला जाता है कि अब फिर कभी नहीं आऊँगा। देखकर निकाल करे, ज्ञाता-द्रष्टा रहकर तो फिर कभी नहीं आएगा वह पक्का (तय) हो गया।

प्रश्नकर्ता : तो जैसे-जैसे आत्मा का खुद का स्वरूप बाहर आता जाता है, वैसे-वैसे...

दादाश्री : वह खत्म होता जाता है।

प्रश्नकर्ता : बस, इतनी ही बात है!

दादाश्री : बस, बस इतनी ही बात है लेकिन कब आएगा? जब वह इस ज्ञान में रहेगा तब। हमारी पाँच आज्ञा में रहेगा तब।

प्रश्नकर्ता : वह तो ठीक है। यानी इस तरह पूरा अहंकार कम्पलीट चला जाता है और खुद के स्वभाव में आ जाता है।

दादाश्री : संपूर्ण जाना चाहिए। जैसे-जैसे जाता है वैसे-वैसे उसके खुद के स्वभाव में आता जाता है। एक चला गया, सजीव अहंकार गया। अब जैसे-जैसे निर्जीव (अहंकार) कम होता जाएगा, वैसे-वैसे प्रकटपना होता जाएगा।

अविनाशी वस्तु पर ही लागू होता है सत्ता शब्द

प्रश्नकर्ता : यानी एक तरफ आत्मा संपूर्ण सत्ता वाला है और (दूसरी तरफ) अहंकार संपूर्ण सत्ता रहित है, ऐसा है?

दादाश्री : हाँ, उसे सत्ता ही नहीं होती न! मूल चीज़ हैं ही नहीं न! वे तो सब विनाशी चीज़ें हैं, यों ही मानी हुई। यों माना था इसलिए चला गया। देखो न, हम कहते हैं न, कि एक घंटे में अहंकार चला जाता है। वह भी स्वीकार करता है, मेरा अहंकार चला गया।

प्रश्नकर्ता : वर्ना फिर जाता ही नहीं न?

दादाश्री : वर्ना नहीं जाता।

प्रश्नकर्ता : उसकी सत्ता होती तो कौन निकाल सकता था?

दादाश्री : लोग कहते हैं न, कि अहंकार-ममता निकालना है पर उनसे तो अनंत जन्मों में भी वह होता नहीं। जबकि हम कहते हैं कि थोड़ी

देर में चला जाता है। अरे, वह भी स्वीकार करता है कि चला गया। वैज्ञानिक तरीके से स्वीकार करता है। वर्ना क्या मार-पीटकर स्वीकार करवा सकते हैं?

प्रश्नकर्ता : नहीं, नहीं।

प्रश्नकर्ता : अविनाशी वस्तु पर ही सत्ता लागू होती है?

दादाश्री : और किसी पर लागू नहीं होती। ये तो सब एडजस्टमेन्ट्स हैं।

प्रश्नकर्ता : *पुद्‌गल* को भी सत्ता वाला कह सकते हैं न?

दादाश्री : सब अपनी-अपनी सत्ता में हैं, सत्ता के बाहर नहीं है।

सत्ता है, इसलिए अपने खुद के स्वभाव में है

प्रश्नकर्ता : यह जो टंकोत्कीर्ण कह रहे हैं, इसमें दोनों तत्त्व स्वसत्ता में रहे हुए हैं, ऐसा कहना चाहते हैं? टंकोत्कीर्ण वह किसी (सत्ता) को लेकर शब्द है?

दादाश्री : वह (हम) सत्ता दिखा और समझा रहे हैं। सत्ता को समझ ले तो टंकोत्कीर्ण समझ ही जाएगा वह।

प्रश्नकर्ता : तो खुद स्वभाव में है, उसे ही उसकी सत्ता कहते हैं?

दादाश्री : नहीं, सत्ता ही है। स्वाभाविक बाद में है, सत्ता है इसीलिए स्वभाव में है, क्या है? स्वभाव में है इसलिए सत्ता नहीं है, सत्ता है इसीलिए स्वभाव में है, यदि सत्ता नहीं होती तो स्वभाव बिगड़ जाता।

प्रश्नकर्ता : वह सत्ता स्वाभाविक और विभाविक ऐसी दोनों तरह की हो सकती है क्या?

दादाश्री : नहीं हो सकती। ऐसा कुछ हुआ ही नहीं है इसमें। यह तो सब, यह जो विभाविक हुआ न, वह तो विशेष ज्ञान उत्पन्न हो गया है, उससे ये क्रोध-मान-माया-लोभ उत्पन्न हुए हैं सब। इसमें फिर अपने खुद के गुण हों तभी विभाविक कहा जाता है। परंतु इसे विभाविक इसलिए कहा है क्योंकि विशेष गुण इसमें उत्पन्न हुए हैं, विरुद्ध गुण नहीं। दोनों की उपस्थिति से सूर्य और समुद्र दोनों की उपस्थिति से उसके भीतर भाप बनती है, उसमें समुद्र के बाप का क्या जाता है? समुद्र, समुद्र ही रहता है, सूर्य भी सूर्य ही रहता है और यह उत्पन्न होता है, इस उत्पन्न हुए पर असर होता है सारा।

ज्ञान-दर्शन स्वाभाविक गुण, सत्ता अलग चीज़

प्रश्नकर्ता : तो सत्ता का अर्थ है कि ज्ञान स्वरूप से रहा हुआ है, ऐसा है? ज्ञान सत्ता में रहा हुआ है, ऐसा है क्या?

दादाश्री : नहीं। अपनी खुद की सत्ता में अर्थात् अपनी खुद की सत्ता में कोई दखल नहीं कर सकता उसे स्वसत्ता वाला कहते हैं। कोई कुछ भी नहीं कर सकता उसे सत्ता वाला कहते हैं। अपनी खुद की सत्ता में अन्य तत्त्व कुछ भी नहीं कर सकता।

प्रश्नकर्ता : इसलिए दादा ने सत्ता को ऐसा कहा कि जिसका कुछ बदल नहीं सकता, वह उसकी...

दादाश्री : कोई किसी को बदल नहीं सकता।

प्रश्नकर्ता : बदल नहीं सकता, वह उसकी सत्ता है, स्वयं में रहने की सत्ता है।

दादाश्री : संपूर्ण सत्ता है उसकी। कोई उसकी सत्ता को इधर-उधर नहीं कर सकता।

प्रश्नकर्ता : तो बाकी ये सब ज्ञान-दर्शन ये उसके गुण हैं?

दादाश्री : ये तो स्वाभाविक गुण हैं और वही आत्मा है। वे स्वाभाविक गुण, वही आत्मा है। आत्मा नाम की अन्य कोई चीज़ नहीं है।

प्रश्नकर्ता : और सत्ता अर्थात् उसका कोई कुछ नहीं कर सकता, ऐसी सत्ता है?

दादाश्री : कोई कुछ नहीं कर सकता ऐसी सत्ता, स्वसत्ता। अपनी खुद की सत्ता में रहता है। समुद्र की सत्ता, वह नहीं जाती, चाहे सूर्य कितना ही शोर मचाए या लोग उछलकूद करें, परंतु समुद्र अपनी सत्ता नहीं खोता।

आत्मा तो अपनी खुद की सत्ता छोड़ता ही नहीं न, कभी भी! चाहे कितना भी *पुद्गल* का ज़ोर हो, तब भी उसकी अपनी सत्ता को कुछ भी नुकसान नहीं होता है।

केवलज्ञान, सत्ता के रूप में या शक्ति के रूप में?

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञान सत्ता के रूप में है या शक्ति के रूप में?

दादाश्री : किसी दृष्टि से शक्ति रूप भी है और किसी दृष्टि से सत्ता रूप भी है। दोनों ही गलत नहीं हैं।

प्रश्नकर्ता : कुछ लोग शक्ति रूप है, ऐसा मानते हैं और...

दादाश्री : वह कुछ भी हो लेकिन दोनों ही एक सरीखे हैं, लगभग नियरली (नज़दीकी) हैं, गलत नहीं हैं। वह सत्ता रूप भी प्रूव (साबित) हो सकता है और शक्ति रूप भी प्रूव हो सकता है। यह सब समझ का फर्क है।

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञान सत्ता रूप है अर्थात् उसके लिए ऐसा स्पष्टीकरण देते हैं कि जिस प्रकार सूर्य के आसपास बादल छा जाते हैं और जब वे आवरण धीरे-धीरे हट जाते हैं, वैसे-वैसे उसकी सत्ता प्रकट होती है। सूर्य बादलों में आवरण में है, यानी कि सत्ता में तो सूर्य पूरी तरह से हाज़िर है ही, जबकि शक्ति के लिए तो ऐसा कहते हैं कि धीरे-धीरे प्रकट होती जाती है।

दादाश्री : कुछ कहते हैं कि आत्मा शक्ति रूप है और दूसरे कहते हैं कि आत्मा सत्ता रूप है। कुछ कहते हैं कि जैसे-जैसे शक्ति खिलती है वैसे-वैसे शक्ति प्रकट होती है, दूसरे कहते हैं कि कोई ज्ञानी पुरुष मिल जाएँ और आवरण तोड़ दें तो सत्ता रूप ही है। बात भी सही है। आवरण तोड़ देने से परसत्ता खत्म हो जाती है और स्वसत्ता में आ जाता है।

बाहर सामान्य मनुष्यों में शक्ति रूप केवलज्ञान है। भोजन पिटारे में है, चाबी के बिना खोला नहीं जा सकता और खाया नहीं जा सकता। आप सभी महात्माओं के पास (ज्ञान लेने के बाद) सत्ता के रूप में केवलज्ञान है। इतना फर्क है, आप में और मूढ़ात्मा मनुष्यों में।

केवलज्ञान भीतर सत्ता में रहा हुआ है, लेकिन (आप में) आज उपयोग में नहीं आ रहा है। ये सत्संग करते हैं, तो उसे व्यक्त करते हैं। एक दिन संपूर्ण निरावृत हो जाएगा, तब संपूर्ण व्यक्त हो जाएगा! फिर मेरी तरह आपका भी आनंद जाएगा ही नहीं।

आत्माज्ञानी-केवलज्ञानी में सत्ता को लेकर फर्क

प्रश्नकर्ता : तीर्थंकरों, साधु, आचार्यों इन सभी में फर्क क्या है?

दादाश्री : इन सभी में सत्ता के प्रकाश के

होने में फर्क है। आत्मा 'केवलज्ञान स्वरूप' है लेकिन सत्ता में फर्क है। सत्ता अर्थात् आवरण की वजह से केवलज्ञान दिखाई नहीं देता, बाहर का दिखाई देता है। सत्ता वही की वही है। जैसे किसी को डेढ़ नंबर का चश्मा हो और किसी को चश्मा न हो तो फर्क पड़ता है न? उसके जैसा है। तीर्थंकर संपूर्ण सत्ताधारी हैं।

प्रश्नकर्ता : यह नाप कौन निकाल सकता है?

दादाश्री : एक तो वे खुद निकाल सकते हैं और दूसरी, उनकी वाणी!

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञानी की स्थिति और सिद्धक्षेत्र में बिराजे हुए मुक्तात्मा सिद्धात्माओं की स्थिति, उन दोनों की तात्त्विक स्थिति में क्या अंतर है?

दादाश्री : केवलज्ञान की स्थिति में देह का बोझ होता है जबकि सिद्धों की स्थिति में कोई बोझ नहीं होता। द्रव्य-गुण-पर्याय एक ही हैं, उसमें समसत्तावान परंतु देह का भार रहा हुआ है न! इसलिए (सत्ता) सत्तापना में है जबकि सिद्धों की सत्ता प्रकटपना में है।

प्रश्नकर्ता : सत्ता में समानता है।

दादाश्री : हाँ, समानता है। केवलज्ञान हो गया अर्थात् आत्मा एब्सल्यूट हो गया, कम्प्लीट और एब्सल्यूट हो गया, उसे सिद्ध ही कहते हैं। यह सिर्फ देह का बोझ रहा हुआ है। संसार में हैं तब तक केवलज्ञान स्वरूप उपयोगमय रहता है, शुद्ध उपयोग रहता है। वहाँ शुद्ध उपयोग सहज ही रहता है। वास्तव में शुद्ध उपयोग ही नहीं, यों ही स्वाभाविक दशा! सिद्धदशा अर्थात् स्वाभाविक दशा है। झलकता है अंदर। उन्हें देखने नहीं जाना पड़ता, उपयोग नहीं देना पड़ता।

केवलज्ञान अर्थात् सिर्फ केवल ज्ञानसत्ता

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञान और अनंत ज्ञान में क्या फर्क है?

दादाश्री : केवलज्ञान के अलावा अन्य कोई सत्ता का उपयोग नहीं होता वह है केवलज्ञान। जानना और देखना वही सत्ता। आत्मा खुद केवलज्ञान ही है। यानी यह देह है न, वह स्थूल स्वरूप है। फिर उसके भीतर अंत:करण और वह सब सूक्ष्म स्वरूप से हैं। आत्मा तो केवलज्ञान स्वरूप ही अर्थात् प्रकाश स्वरूप ही है, अन्य कुछ है ही नहीं, खुद प्रकाशमय ही है, अन्य कोई स्वरूप है ही नहीं उसका। केवलज्ञान स्वरूप! केवल अर्थात् एब्सल्यूट। अन्य कुछ उसमें नहीं मिला है। मिलावट नहीं है, कहते हैं। एब्सल्यूट ज्ञान ही है। खुद ज्ञान सत्तामात्र है।

केवलज्ञान वह सत्ता वाइज़ है जबकि अनंत ज्ञान, वह आधारी है। ज्ञेय अनंत हैं, इसलिए ज्ञान अनंत हैं। जबकि केवलज्ञान में ज्ञान की ही सत्ता है, अन्य कोई सत्ता नहीं है। किसी भी अवस्था में राग-द्वेष नहीं होते, चोर-सेठ सभी समान लगते हैं। केवल प्रकाश सत्ता! जबकि लोग तो क्या से क्या मान बैठे हैं।

प्रश्नकर्ता : इस तरह हम बोलते तो हैं कि 'मैं अनंत ज्ञान वाला हूँ', परंतु वास्तव में आत्मा, किसी चीज़ का पज़ेशन तो करता ही नहीं न?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : तो खुद ज्ञान स्वरूप ही है।

दादाश्री : ज्ञानस्वरूप ही है, अन्य कुछ नहीं है। एब्सल्यूट ज्ञान है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, तो गुजराती में लिटरली मीनिंग (शाब्दिक अर्थ) क्या होता है?

दादाश्री : केवलज्ञान कहते हैं, केवलज्ञान! एब्सल्यूट!

प्रश्नकर्ता : ज्ञान का अर्थ जानपना होता है?

दादाश्री : ज्ञायकपन। ज्ञायक भाव के अलावा अन्य कोई भाव नहीं, उसे केवलज्ञान कहते हैं।

ज्ञाता की सत्ता में आ गया, वह ज्ञायक

प्रश्नकर्ता : ज्ञाता और ज्ञायक में क्या फर्क है?

दादाश्री : आत्मा हमेशा ज्ञाता-द्रष्टा तो है ही, अज्ञान दशा में भी वह होता है। जबकि ज्ञायक अर्थात् ज्ञाता की सत्ता में आ गया वह। सिर्फ जानने का ही काम करता रहता है, तब वह ज्ञायक कहलाता है। वर्ना, वह काम नहीं कर रहा हो तब भी ज्ञाता तो कहलाता ही है। ज्ञाता, वह ज्ञाता है और ज्ञेय, वह ज्ञेय है और ज्ञायक जब सत्ता में होता है तब ज्ञायक कहलाता है। सत्ता अर्थात् जब काम कर रहा हो, उस समय।

प्रश्नकर्ता : 'जानपने के इस तरफ ज्ञेय है, और जानपने की दूसरी तरफ की कुछ बातें सुनने का मन करता है, वह बताइए।

दादाश्री : वह ज्ञायक कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : ज्ञायक होता है उसके लिए ज्ञेय अनेक प्रकार के होते हैं या नहीं?

दादाश्री : ज्ञायक है वह अनंत ज्ञानवाला है, इसलिए ज्ञेय भी अनंत हैं। ज्ञायक स्वभाव कैसा है? अनंत ज्ञानवाला है। क्यों अनंत ज्ञान भाग है? ज्ञेय भी अनंत हैं, इसलिए।

प्रश्नकर्ता : अब ज्ञायक भाव को स्मृति का संग नहीं है, ज्ञायक भाव का कोई आधार ही नहीं होता।

दादाश्री : आधार की ज़रूरत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, तो वहाँ पर फिर क्या है? ज्ञायक से आगे क्या है?

दादाश्री : कुछ भी नहीं है। खुद ज्ञायक है, जाननेवाला खुद है, सब कुछ खुद ही है और खुद, खुद को जानता है। क्योंकि यह दर्पण जैसा है, अंदर पूरी दुनिया दिखाई देती है। प्रयत्न नहीं करना पड़ता।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह तो जानपना है।

दादाश्री : ज्ञायक।

प्रश्नकर्ता : ज्ञायक लेकिन उसमें ज्ञायक में आया और जब हम ज्ञायक से आगे जाएँ, तब क्या होता है?

दादाश्री : आगे नहीं है। यह ज्ञायक भी कल्पित व्यवहार के लिए ही है, बाकी, ज्ञायक भी नहीं है वह। वहाँ तो कोई शब्द है ही नहीं। वह तो अभी जब तक हम व्यवहार में हैं, तभी तक है, वहाँ पहुँचने तक, अपने हिस्से में यह आया है और जब वह हिस्सा नहीं रहेगा, तब वह 'खुद' ही रहेगा। वह खुद, खुद ही है। उसमें कोई भाग नहीं है, विभाजन नहीं है, कुछ भी नहीं है।

देह में ही आत्मबुद्धि, यह मैं ही हूँ, उसे ही केवल अज्ञान कहते हैं और जब आत्मा में संपूर्ण आत्मबुद्धि हो गई और अन्य कोई दखल न रहा तब केवलज्ञान कहते हैं। हाँ, बस केवल प्रकाश ही रहा।

ज्ञान और ज्ञायक अव्यतिरेक गुण

प्रश्नकर्ता : प्रकाश और प्रकाशक वे अव्यतिरेक (अन्वय) गुण हैं? ज्ञान और ज्ञायक अव्यतिरेक गुण हैं?

दादाश्री : हाँ, वे अव्यतिरेक गुण हैं, ज्ञान

और ज्ञायक। जबकि प्रकाश और प्रकाशक। इसमें प्रकाशक है, वह अलग चीज़ है। ज्ञायक को प्रकाशक नहीं कहते, ज्ञायक को ज्ञायक कहते हैं क्योंकि लोग, पब्लिक नहीं समझ सकेगी। यह (प्रकाशक) कहना हो तो कह सकते हैं, परंतु पब्लिक नहीं समझ सकेगी। प्रकाशक तो यहाँ पर जगत् को प्रकाशित करता है, इसलिए इसे बुद्धि प्रकाशक कहते हैं। जबकि वह जानना उसे प्रकाश कहते हैं। अर्थात् जो बुद्धि को जानने वाला है...

प्रश्नकर्ता : बुद्धि प्रकाशित करती है ऐसा जो जानता है...

दादाश्री : उसे प्रकाशक कहते हैं। प्रकाशक वह बुद्धि के आधर पर हुआ और जो जाना...

प्रश्नकर्ता : जिसके आधार पर जानता है, वह प्रकाश है?

दादाश्री : वह प्रकाश है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् प्रकाश-प्रकाशक अव्यतिरेक गुण है?

दादाश्री : हाँ, अव्यतिरेक अर्थात् एक ही है, अलग नहीं है।

प्रश्नकर्ता : इसी तरह ज्ञान और ज्ञायक अव्यतिरेक हैं?

दादाश्री : हाँ, अव्यतिरेक।

'केवल' दिखाए, वह केवलज्ञान सत्ता का ज्ञान

प्रश्नकर्ता : दादा, आपमें यह ज्ञान कहाँ से निकलता है?

दादाश्री : यह सत्ता ज्ञान है। हमें याद नहीं होता कुछ भी। ज्ञान में सब कुछ झलकता है इसलिए हम कह सकते हैं ऐसा। यह मैं जो बोलता हूँ न, वह झलकी हुई चीज़ के बारे में बोलता हूँ। वही साइन्स है और इसे ही 'सत्ता ज्ञान' कहा है। केवलज्ञान की सत्ता है और उस सत्ता का ज्ञान, सहज निकलता रहता है।

यह हमारा केवलज्ञान सत्ता में है, हमारे उसमें नहीं है, प्रवर्तन में नहीं है। सत्ता में है इसलिए दर्शन में आया हुआ है। इसलिए भूल वाला वाक्य नहीं निकलता क्योंकि हम पुस्तक का वाक्य बोलते ही नहीं, केवलज्ञान की ही बात बोलते हैं। जिस पर कभी भी क्रास (नकार) न करना पड़े ऐसी।

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञान सत्ता में है, उसका अर्थ क्या है?

दादाश्री : सत्तापना अर्थात् सत्तापना तो सभी में हैं ही, सत्तापना तो रहा ही है, परंतु सत्ता दर्शन में आई है। ज्ञान में नहीं आई सिर्फ, समझ में आया है। अत: आश्चर्य है यह काल का! धन्य है कि मुँह से बोला हुआ ही है यह सारा ज्ञान! पुस्तक पढ़ी ही नहीं न! पुस्तक की बात ही नहीं है न!

यह सब आप क्या देख रहे हो? क्या सुन रहे हो? तब कहते हैं, देख रहे हैं केवलज्ञान और सुन रहे हैं केवलज्ञान!

प्रश्नकर्ता : देख रहे हैं केवलज्ञान और सुन रहे हैं केवलज्ञान?

दादाश्री : हाँ, क्योंकि यह प्रकाश किसका है? तब कहते हैं, केवलज्ञान का। किस प्रकाश से बोल रहे हो आप? तब कहते हैं, केवलज्ञान के प्रकाश से। अर्थात् आप केवलज्ञान देख सकते हो और केवलज्ञान सुन सकते हो! ऐसा यहाँ तक पहुँच गए हो, इसके बाद अब क्या चाहिए इससे ज़्यादा?

जय सच्चिदानंद

Atmagnani Pujya Deepakbhai's UAE - Kenya Schedule - 2025						
Date	**Day**	**City**	**Time**	**Event**	**Venue**	**Contact No.**
08-Sep	Mon	Mombasa	Full Day	Kenya Shibir	Prior Registration Required	(+254) 734 333 330
09-Sep	Tue					
10-Sep	Wed					
12-Sep	Fri	Nairobi	08.00pm - 10.00pm	Pujyashree Satsang	The Kenya Brahma sabha, 3rd Parklands Avenue, Parklands, Nairobi	(+254) 734757683 (+254) 795923232
13-Sep	Sat		04:00 - 07:15pm	**GNAN VIDHI**		
14-Sep	Sun		08.00pm - 10.00pm	Pujyashree Satsang		
17-Sep	Wed	Dubai	08.00pm - 10.00pm	Pujyashree Satsang	Dusti Thani Hotel, 188 Sheikh Zayed Road, Dubai	(+971) 55 731 6937 (+971) 50 879 2586
18-Sep	Thu		07.30pm - 10.00pm	**GNAN VIDHI**		
19-Sep	Fri		04.30pm - 08.00pm	Pujyashree Satsang		
21-Sep	Sun	Dubai	Full Day	UAE Shibir	Prior Registration Required	(+971) 55 731 6937 (+971) 50 879 2586
22-Sep	Mon					
23-Sep	Tue					

आत्मज्ञानी पूज्य नीरूमाँ और पूज्य दीपकभाई के आशीर्वाद प्राप्त आप्तपुत्रों के सत्संग कार्यक्रम

मध्यप्रदेश

उज्जैन **दिनांक : 14 सितम्बर** **संपर्क : 9826487407**
इन्दौर **दिनांक : 14 सितम्बर** **संपर्क : 9229500845**
अंजड **दिनांक : 15 सितम्बर** **संपर्क : 9617153253**
खरगोन **दिनांक : 16 सितम्बर** **संपर्क : 9425643302**
जबलपुर **दिनांक : 17 सितम्बर** **संपर्क : 9425160428**
सागर **दिनांक : 18 सितम्बर** **संपर्क : 9165818181**
दमोह **दिनांक : 19 सितम्बर** **संपर्क : 9926985853**
भोपाल **दिनांक : 20-21 सितम्बर** **संपर्क : 9826926444**
ग्वालियर **दिनांक : 21 सितम्बर** **संपर्क : 9926265406**

उतराखंड

हरिद्वार **दिनांक : 16 सितम्बर** **संपर्क : 9719415074**
ज्योलिकोट (नैनीताल) **दिनांक : 17 सितम्बर** **संपर्क : 9820977276**
हल्द्वानी **दिनांक : 18 सितम्बर** **संपर्क : 9412084002**

उत्तरप्रदेश

आगरा **दिनांक : 19 सितम्बर** **संपर्क :** 9219732860
झाँसी **दिनांक : 20 सितम्बर** **संपर्क :** 9415588788

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **मुंबई :** 9323528901, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9924341188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा :** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर :** 9924343687, **भावनगर :** 9313882288, **अहमदाबाद (दादा दर्शन) :** 9574001445, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली :** 9810098564, **बैंगलूर :** 9590979099, **कोलकता :** 9830080820 **यु.एस.ए.-केनेडा:** +1 877-505-3232, **यु.के.:** +44 330-111-3232, **ऑस्ट्रेलिया:** +61 402179706

शिकागो : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 26 - 27 जून 2025

सत्संग - ज्ञानविधि

स्वामीनारायण मंदिर में दर्शन

ओस्टीन : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 2 - 3 जुलाई 2025

प्रश्नोत्तरी

सत्संग

जेक्सनविल : गुरुपूर्णिमा महोत्सव : ता. 6 से 11 जुलाई 2025

स्वागत

पूजन-आरती

सत्संग

दर्शन

अगस्त 2025
वर्ष-20 अंक-10
अखंड क्रमांक - 238

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. G-GNR-348/2024-2026
Valid up to 31-12-2026
Licensed to Post Without Pre-payment
No. PMG/NG/036/2024-2026
Valid up to 31-12-2026
Posted at Adalaj Post Office
on 15th of every month.

स्वसत्ता का भान हो तो खुद परमात्मा हो जाए

'आप कौन हो', वह ही आप नहीं जानते। आप चंदूभाई को ही 'मैं हूँ' ऐसा मानते हो। वह तो परसत्ता है, उसमें आपका क्या है? आप परसत्ता के अधीन हो। अंत तक परसत्ता है, लट्टू है! सब 'व्यवस्थित' के अधीन है। खाते हो, पीते हो, शादी में जाते हो, वह परसत्ता के अधीन है। क्रोध, मान, माया, लोभ होते हैं, वे परसत्ता के अधीन हैं। आप परक्षेत्र में बैठे हो, पर के स्वामी होकर बैठे हो और सत्ता भी परसत्ता इस्तेमाल करते हो। 'स्व' को, स्वक्षेत्र को और स्वसत्ता को जानते ही नहीं। आपकी स्वसत्ता आपने नहीं देखी, उसका आपको भान नहीं है। स्वसत्ता का भान हो तब वह खुद परमात्मा हो सकता है! एक क्षण भी स्वसत्ता का भान हो तो वह परमात्मा हो जाए!

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner. Printed at Amba Multiprint, Opp. H B Kapadiya New High School, Chhatral - Pratappura Road, At - Chhatral, Tal : Kalol, Dist. Gandhinagar – 382729.